अध्याय- षष्टम

निष्कर्ष एवं सुझाव

भारत के उत्तर प्रदेश राज्य ने आज़ादी के बाद पहली बार सन 1961 में बलवंतराय मेहता समिति की रिपोर्ट के आधार पर पंचायतों की त्रिस्तरीय प्रणाली को अपनाया गया। 1961 के अधिनियम में ग्राम पंचायतों के अलावा क्षेत्र समिति और जिला परिषद का भी गठन किया गया। उत्तरप्रदेश में ने पंचायती राज 73 वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम के अनुरूप एक नया पंचायती राज कानून बनाया गया। इसमें संयुक्त प्रांत पंचायत राज अधिनियम, 1947 और उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत अधिनयम 1961 जैसे दो मौजूदा अधिनियमों में संशोधन किया गया, जिसमें 73 वें संविधान संशोधन के अनुरूप प्रावधान शामिल हैं।

जनजातीय विकास को एक ऐसे दृष्टिकोण के रूप में माना गया है जो जनजातीय लोगों को केंद्र स्तर पर रखता है। शब्द 'जनजाति' लैटिन शब्द 'ट्राइबस' से लिया गया है जो एक विशेष प्रकार के सामान्य और राजनीतिक संगठन को दर्शाता है जो कई अलग-अलग देशों और समाजों में पाया जाता है। यह शब्द अलग-अलग देशों में अलग-अलग अर्थ रखता है। भारत में, यह उन लोगों के समूह को संदर्भित करता है जिन्हें आदिम काल से विभिन्न नामों से जाना जाता है जैसे कि वनवासी, आदिवासी, वन्याजति और आदिमती। एक जनजाति को एक सामान्य भाषा, विशिष्ट रीति-रिवाजों, संस्कारों और अनुष्ठानों, विश्वासों, साधारण सामाजिक रैंक और राजनीतिक संगठन और संसाधनों के सामान्य स्वामित्व वाले स्वदेशी

लोगों के समूह के रूप में भी परिभाषित किया गया है। प्रत्येक जनजाति में कुछ विशिष्ट संस्कृति होती है जो इसे अन्य जनजातियों से अलग करती है।

यह शोध में उत्तरप्रदेश राज्य के सोनभद्र जिले में आदिवासी जनजातीय समाज के विकास में पंचायती राज की भूमिका त्रिस्तरीय पंचायती राज के तहत बुनियादी प्रणालियों, संरचनाओं और अभ्यावेदन की जांच करता है। अधिनियमों के तहत सूचना, पंचायती राज से संबंधित और 73 वें संवैधानिक संशोधन का पालन करने के लिए किए गए संशोधनों का अध्ययन किया गया और अन्य माध्यमिक स्रोतों का भी उपयोग किया गया। इसके अलावा, फोकस्ड ग्रुप डिस्कशन और की-इनफॉर्मेंट इंटरव्यू जैसे पार्टिसिपेटरी टूल्स का उपयोग करके फील्ड सर्वे के प्राथमिक गुणात्मक डेटा को एकत्र किया गया और माध्यमिक स्रोतों से जानकारी को पूरक और विश्लेषण करने के लिए एकत्र किया गया। ग्रामीण विकास विभाग द्वारा चलाए जा रहे आदिवासी विकास कार्यक्रमों के प्रभाव तक पहुँचने के लिए सोनभद्र जिले (यू.पी.) का अध्ययन, आदिवासी पुरुष और महिलाओं की जागरूकता और सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक गतिविधियों में उनकी भागीदारी का अध्ययन करना, पंचायती राज व्यवस्था में आदिवासी समाज की भागीदारी की उभरती प्रवृत्ति का अध्ययन करना, आदिवासीयों के सशक्तीकरण के लिए विकास के सरकारी कार्यक्रमों के कार्यान्वयन का मूल्यांकन करना, पंचायतों के निर्वाचित सदस्यों से अपेक्षित भूमिका और उनके द्वारा किये गए प्रदर्शन के स्तर का अध्ययन किया गया है।

भारत में विभिन्न क्षेत्रों में आदिवासी जनजाति समूह की स्थिति उनके सामाजिक बहिष्कार के विभिन्न रूप हैं। वे सामाजिक बहिष्कार की पीड़ा को सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक क्षेत्रों में बहुत गहराई से अनुभव करते हैं। उत्तर प्रदेश में जनजातियो की समकालीन स्थिति से

पता चलता है कि वे शैक्षिक रूप से अशिक्षित , आर्थिक रूप से गरीब और सामाजिक रूप से बहिष्कृत रहे हैं। कम भूमि का होना , साक्षरता के निम्न स्तर के साथ, वे तेजी से औद्योगिक विकास की कमी और राज्य में गरीबी रेखा से नीचे होने के कारण अधिकांश रोजगार और मजदूरी के निम्न स्तर की रही हैं। उन्हें भूमि स्वामित्व, रोजगार के निम्न स्तर और आय से बहुत अधिक बाहर रखा गया है। इसके अलावा, वंचित और बहिष्कृत समूहों के रूप में, राज्य में जनजातियो का बड़ा जनसमूह उन अवसरों का उपयोग नहीं कर पाया है। जनजातियो और गैर-जनजातियो के बीच असमानता राज्य में काफी बनी हुई है। हालांकि, राजनीतिक चेतना का उदय और राज्य में जनजातियो के बीच राजनीतिक जागृति, नीचे से एक उथल-पुथल के कारण, जिसने पारंपरिक जाति पदानुक्रम पर सवाल उठाया है। जिससे नागरिक समाज के लोकतांत्रिककरण की प्रक्रिया शुरू हो गई है। इस प्रक्रिया ने सामाजिक-राजनीतिक गोलबंदी, पहचान का निर्माण, जनजातियो की संख्या में वृद्धि और दल और दल के नेतृत्व वाली पार्टियों और संगठनों के उभरने को आकार दिया है। इस संदर्भ में, इस अध्ययन का उद्देश्य पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से जनजातियो के सामाजिक समावेश में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका की जांच करना था। शोध अध्ययन 73 वें संवैधानिक संशोधन के प्रकाश में किया गया था जो स्थानीय क्षेत्रों में महत्वपूर्ण हस्तक्षेप करने वाले निकायों में से एक है। पंचायती राज संस्थानों को मुख्य रूप से उभरते जनजातियो की सेवा करने वाले संस्थानों के रूप में देखा जा सकता है। वे पंचायत चुनावों के माध्यम से जनजातियो को लामबंद करने और उच्च जातियों के साथ उनके परस्पर जुड़ाव के लिए सफल साधन साबित हो रहे हैं, जो बदले में ग्रामीण स्तर पर सामाजिक सहभागिता पैटर्न को बदल रहे हैं। इसलिए, इस शोध का मुख्य उद्देश्य यह समझना था कि चुने गए जनजाति प्रतिनिधि वास्तविक कामकाज में और विशेष रूप से पंचायतों में निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में प्रभावी रूप से भाग लेने में सक्षम हैं?

और इस भागीदारी ने ग्राम पंचायत स्तर पर उनकी सामाजिक सहभागिता को कैसे बदल दिया ? और इस प्रकार राजनीतिक समावेश के माध्यम से जनजातियो का समग्र सामाजिक समावेश हुआ। अध्ययन के मुख्य उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए कुछ उद्देश्यों को तैयार किया गया था और परिकल्पना का निर्माण किया गया था। अध्ययन के विशिष्ट उद्देश्य इस प्रकार थे: ग्राम पंचायत स्तर पर निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों के सामाजिक आर्थिक प्रोफाइल बनाना, पंचायतों की निर्णय प्रणाली में निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों की प्रभावी भागीदारी का आकलन करना, व्यक्तिगत और सामाजिक-सांस्कृतिक अंतरिक्ष स्तर पर निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों साथ ही महिला की सामाजिक सहभागिता पर प्रभावी भागीदारी के प्रभाव का आकलन करने के लिए, जनजाति और गैर-जनजाति निर्वाचित प्रतिनिधियों के बीच सामाजिक संबंधों की प्रकृति की जांच करना, निर्णय लेने और सामुदायिक लामबंदी में अपनी भूमिका के साथ अपनी स्वयं की भागीदारी और उनकी संतुष्टि के स्तर पर निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों की धारणा का दस्तावेजीकरण करना, निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों के निष्कर्षों में समस्याओं और बाधाओं की पहचान करना शामिल रहा है। उद्देश्यों के आधार पर, निम्नलिखित परिकल्पना की सटीकता का परीक्षण किया गया है :जिसमे पंचायती राज संस्थानों के स्तर पर निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों के निर्णय लेने में प्रभावी भागीदारी, उच्च स्तर पर चुने गए जनजाति प्रतिनिधियों के सामाजिक संपर्क स्तर में सुधार है।

सोनभद्र जनपद अपनी बहुआयामी ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं भौगोलिक उपलब्धियों के कारण विश्व में अपना एक अलग गौरवपूर्ण स्थान रखता है। यहाँ पृथ्वी पर जीवन के आरम्भ के समय के लगभग डेढ़ अरब वर्ष पुराने फॉसिल्स सलखन में पाये गये है। वर्तमान में यह जनपद प्राचीन जनजातीय सभ्यता संस्कृति एवं नवीन औद्योगिक सभ्यता- संस्कृति के समन्वय के प्रतीक के रूप में विश्व में अपनी एक गौरवूपर्ण पहचान बनाये हुए है।

भौगोलिक संरचना की दृष्टि से इस जनपद के सम्पूर्ण भू-भाग को दो भागों में बांटा गया है। पहला मध्यवर्तीय पठार है इसके अन्तर्गत विन्ध्य पर्वत श्रृंखलाओं के पठारी हिस्से से होते हुए कैमूर पर्वत श्रृंखलाओं की अन्तिम सीमा सोन नदी तक फैला हुआ है। रावर्ट्सगंज, घोरावल, चतरा तथा नगवाँ विकास खण्ड इस संभाग में स्थित है। दूसरा सोनघाटी है इसके अन्तर्गत सोन नदी के दक्षिण का सम्पूर्ण भू-भाग आता है इसे सोनपार भी कहा जाता है।

सोनभद्र में आदिम जनजातियों का इतिहास उतना ही पुराना है जितना की यहाँ की मानव जातियों का इतिहास पुराना है। इन आदिम जातियों की संख्या सैकड़ो में है और देश के प्रायः प्रत्येक भाग में ये आदिम जातियाँ किसी न किसी रूप में पायी जाती है। इन जातियों को विभिन्न नामों से जाना जाता है जैसे गिरिजन, आदिवासी, वनवासी, कवीले, जनजाति, आदिम, जाति आदि। इनमें से जो कुछ जातियाँ भारतीय संविधान की परिशिष्ट में अनुसूचित है उन्हें अनुसूचित जनजाति कहा जाता है। इन अनुसूचित जनजातियों को सरकार की ओर से विविध प्रकार की सुविधाए आरक्षण और सहायता प्राप्त है जिनके द्वारा यह अपना शैक्षिक, आर्थिक व्यावसायिक और सामाजिक विकास कर सकती है। जिन जातियों को सरकार की सहायता प्राप्त है उन जातियों में कोल, गोड़, खरवार, अगेरिया, घसिया, पनिका, वैसवार आदि है। भारत की आदिम जातियाँ इस देश की मूल निवासी है। कहा जाता है कि भारत में आर्यो के आगमन के पूर्व में जो जातियाँ रहती थी। उनमें से अधिकांश को आदिम जाति, जनजाति या आदिवासी नाम से जाना जाता था। भारत की जनजातियों का अतीत महान एवं गौरवशाली रहा है। इनकी सभ्यता संस्कृति, साहित्य, संगीत आदि को भी महान और उत्तम कहा जायेगा। अपितु लगातार विदेशी शासन, अशिक्षा, अज्ञानता और अजागृति के कारण इनकी शैक्षिक, आर्थिक एवं राजनैतिक दशा अब भी सोचनीय है। इसाई मिसनरियों के प्रभाव के कारण कतिपय जनजातियों में शिक्षा का प्रचार हुआ है। अतः समाज के शोषक तत्वों

तथा सरकारी अधिकारियों व कर्मचारियों द्वारा उनका दमन व शोषण अब भी जारी है और यह तब तक जारी रहेगा जब तक दलित शोषित जनजातियाँ स्वंय संगठित होकर इसके विरूद्ध खड़ी होकर संघर्ष नहीं करेगी। जनजातियों को शिक्षित होकर संगठित होना चाहिए और अपने अधिकारों तथा सम्मान के प्रति जागरूक होकर अपने ऊपर किये जा रहे दमन व शोषण के विरूद्ध ससक्त संघर्ष करना चाहिए। सांस्कृतिक और राजनीतिक भारत के इतिहास में उत्तर प्रदेश की स्थिति सदा से बड़ी ही विलक्षण एवं महत्वपूर्ण रही है। यही आर्यो का मध्य देश था। अतीत काल से वायव्य कोण से संचरित युयुत्सु जातियों के प्रवेश द्वारा से भारत के हृदय स्थल को मिलने वाले पथ से जुड़े होने के कारण पंचनद और वंगभूमि के बीच उपजाऊ मैइरल का मध्यवर्ती भाग होने के कारण उसका इतिहास उत्तर प्रदेश के सम्पूर्ण इतिहास में अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा है यद्यपि उसे प्रागैतिहासकै अथवा मिथकीय अतीत के सम्बन्ध में हम अल्प ज्ञान है।

जब सारा समाज तेजी से प्रगति की ओर अग्रसर है तो आदिवासी ही पीछे क्यों रहें। अशिक्षा, अन्धविश्वास, समाज द्वारा शोषित, पीड़ित और उपेक्षित रहा है। पिछले कुछ दशकों में उसे विकास का उन्मुक्त वातावरण मिला है। तथापि अन्य कारणों से उसके प्रगति की गति अभी भी धीमी है। अपने देश के अतिरिक्त विदेशों में भी आदिवासियों के विकास के लिए अनेक योजनाएं बनायी जा रही है। उन पर पर्याप्त धन खर्च किया जा रहा है इसलिए अभी भी हमारा उनकी प्रवृत्तियों, मूल समस्याओं, सांस्कृतिक, सामाजिक और कलात्मक गतिविधियों, उनके परम्परागत जीवन यापन के तौर तरीकों से परिचय, तालमेल या सामन्जस्य नहीं हो पाया है।

मनुष्य भौतिक सुख समृद्धि की होड़ में तमाम सामाजिक, प्राकृतिक, मानवीय मूल्यों को ताक पर रखकर स्वार्थी हो गया है उसे आचरण की पवित्रता का भी ध्यान नहीं रह गया है। प्रकृति

मानव की आदि सहचरी है संकटों में यही साथ देती है। भौतिक झंझावात से घबराकर, मनुष्य प्रकृति के बीच ही विश्रान्ति पाता है। यही कारण है कि संत महात्मा संसार से उबकर प्रकृति की गोद में जाते थे। वहाँ से ज्ञान का प्रकाश पाते और उससे जगत को प्रकाशित करते थे। अब जब प्रकृति ही प्रदूषित हो गयी है तो मनुष्य कहाँ जायेगा? उसने चाँद, सितारों पर भी निवास स्थान बनाने का प्रयास किया है। भारत की स्वतन्त्रता के समय सोनभद्र जनपद अत्यन्त पिछड़ा, अविकसित दक्षिणी भाग था। शदियों से उपेक्षित, पहाड़ो एवं घने जंगलों से आच्छादित जंगली बीहड़ क्षेत्र था। जहाँ विकास कार्यो की स्थिति नगण्य थी। जो विकास कार्य हुए थे। वे रावर्टसगंज के आस-पास के क्षेत्रों तक ही सीमित थे। यहाँ न तो अच्छी सड़के थी, न रेल मार्ग और न ही आवागमन के साधन। चिकित्सा, शिक्षा इत्यादि आधारभूत सुविधाओं का भी पूर्णतया अभाव था। कोई भी बड़ी औद्योगिक इकाई नहीं थी। यहाँ की अधिक जनसंख्या आदिवासी जनता कृषि वनोत्पाद एवं छोटे-छोटे घरेलू उद्योगों पर ही आश्रित थी।

यहाँ की औद्योगिक परियोजनाओं की स्थापना का लाभ यहाँ के मूल निवासियों को न मिलकर बाहर के शिक्षित-प्रशिक्षित लोगों को मिला। यद्यपि यहाँ की अधिकांश परियोजनाओं द्वारा विस्थापितों को उचित मुआवजा एवं सेवा योजना के साथ-साथ अत्याधुनिक सुविधाओं से युक्त पुर्नवास बस्तियों को बनाकर, विस्थापन के घाव भरने की कोशिश की गयी किन्तु यह प्रयास असफल रहा। पढ़े-लिखे न होने के कारण उन्हे अच्छे पद नहीं मिल पाये। जिससे अधिकांश आदिवासी आबादी पहले की भाँति कष्ट कर जीवन जी रही है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि स्वतंत्रता के पश्चात सोनभद्र जनपद में अभूतपूर्व प्रगति हुयी जिससे यह जनपद शीघ्र ही अपना सर्वागीण विकास कर अपने आपको देश में प्रतिष्ठापित कर सका । किन्तु पंचायत संस्थाओ के गंभीर प्रयासों से विकास तथा गम्भीर पर्यावरणीय संकट एवं ऐतिहासिक धरोहरों तथा आदिवासी जातियाँ वह उनकी संस्कृति के नष्ट होने से बचाया जा रहा है। देश एवं प्रदेश के साथ-साथ जनहित में भी औद्योगिकरण आवश्यक है। किन्तु इसका अन्धानुकरण उचित नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि औद्योगिक विकास को गतिशील रखा जाए। साथ ही इस बात का भी उपाय किये जाये कि इस से गम्भीर पर्यावरणीय संकट तथा पारिस्थितिक असंतुलन जैसे गम्भीर संकट न उत्पन्न होने पाये । यहाँ की ऐतिहासिक धरोहरों एवं आदिवासियों की जातियाँ एवं सांस्कृति भी सुरक्षित रहे तथा यहाँ की आदिवासी जनता को शिक्षित एवं प्रशिक्षित कर उन्हें भी विकास की मुख्य धारा से जोड़ा जाए। जिससे कि उन्हे भी उनके त्याग व बलिदान का कुछ हद तक लाभ मिल सके तथा नेहरू जी का सपना यहाँ का विकास यहाँ के आदिवासियों के साथ हो सच हो सके।

विश्लेषण से पता चला कि सोनभद्र जिले में आदिवासी ग्रामीण जनजाति ग्राम पंचायत स्तर पर निर्णय लेने में प्रभावी रूप से भाग ले रहे है और इससे व्यक्तिगत और सामाजिक-सांस्कृतिक अंतरिक्ष स्तर पर निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों की सामाजिक सहभागिता पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। सामाजिक समावेश के दो चर (राजनीतिक भागीदारी और सामाजिक सहभागिता) के बीच संबंध की प्रकृति का विश्लेषण भी शोध में किया गया है।

हालाँकि, किसी ने ठीक ही कहा है कि आँकड़े जितना प्रकट करते हैं, उससे कहीं अधिक छिपाते हैं। इस संदर्भ में उत्तरदाताओं के साथ व्यक्तिगत अवलोकन और गहन चर्चा शोधकर्ता

के बचाव में आती है। आंकड़ों का विश्लेषण करते हुए यह पाया गया है कि अधिकांश मामलों में 'अन्य' (गैर-जनजाति) की प्रतिक्रियाएं जनजातियो के कामकाज से संबंधित सवालों पर उनके जनजाति समकक्षों की तुलना में कम अनुकूल रही हैं। इसके बावजूद, गैर-जनजातियो का उच्च अनुपात इस विचार का था कि अब चुने गए जनजाति प्रतिनिधि प्रभावी रूप से अपने कार्य और कर्तव्यों का पालन कर रहे थे और इसने व्यक्तिगत और सामाजिक-सांस्कृतिक अंतरिक्ष स्तर पर जनजातियो की सामाजिक सहभागिता में सुधार किया। सर्वेक्षण के दौरान, जनजाति और गैर जनजाति प्रतिनिधियों के बीच मौजूदा सामाजिक और आर्थिक अंतर के बारे में सूचनाओ की प्राप्ति के लिये चुने गए प्रतिनिधियों की सामाजिक आर्थिक प्रोफ़ाइल को ध्यान में रखा गया था। यह देखा गया कि निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधि अपने गैर-जनजाति समकक्षों की तुलना में अपेक्षाकृत कम थे। यह मुख्य रूप से इस तथ्य के कारण था कि युवा जनजाति प्रतिनिधि पुराने जनजाति प्रतिनिधियों की तुलना में अधिक शिक्षित थे। शिक्षा ने तर्कवाद और जागरूकता के विकास मार्ग को अपनाया है, जिसने युवा पीढ़ी के जनजातियो के विचारों, भावनाओं और विचारों को प्रभावित किया है। इस प्रक्रिया ने राजनीतिक चेतना और राजनीतिक समाजीकरण के विकास में भी मदद की, जिसने बदले में राजनीतिक गतिशीलता और राजनीतिक मुखरता का मार्ग प्रशस्त किया। यह भी देखा गया कि अविवाहित जनजाति प्रतिनिधियों का अनुपात गैर-जनजाति प्रतिनिधियों की तुलना में अधिक था। इस प्रकार, यह इंगित करता है कि युवा और अविवाहित जनजाति ग्रामीण शक्ति संरचना में अपना हिस्सा लेने के लिए अत्यधिक मुखर थे। हालाँकि, समग्र रूप से चुने गए गैर जनजाति प्रतिनिधियों की तुलना में चुने हुए जनजाति प्रतिनिधियों के मामले में शैक्षिक स्तर कम थी। चुने गए गैर-जनजाति प्रतिनिधियों की तुलना में लगभग 30 प्रतिशत चुने हुए जनजाति प्रतिनिधि निरक्षर या सिर्फ साक्षर की श्रेणी में थे,

लेकिन शैक्षिक प्राप्ति में सबसे अधिक अपमानजनक स्थिति सोनभद्र की जनजाति आदिवासी महिला प्रतिनिधियों की रही है। उत्तरदाताओं के बहुमत के लिए प्राथमिक व्यवसाय कृषि था। श्रेणीवार भी, उनकी सामाजिक श्रेणियों के बावजूद, अधिकांश जनजाति और गैर-जनजाति प्रतिनिधि कृषि गतिविधियों में लिप्त पाए गए है । यह पाया गया कि कृषक कार्य वाले गैर-जनजाति प्रतिनिधियों की संख्या अधिक थी और चुने गए जनजाति प्रतिनिधियों की तुलना में मजदूरी में शामिल लोग कम थे। अधिकांश जनजाति महिला प्रतिनिधि मज़दूर थीं, जबकि अधिकांश गैर-जनजाति महिला प्रतिनिधि घरेलू कामों में लगी थीं। इसने प्राथमिक व्यवसाय के संबंध में असमानता को स्पष्ट रूप से प्रतिबिंबित किया। यह भी देखा गया कि निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों और गैर-जनजाति प्रतिनिधियों के बीच मौजूदा आय असमानताएं थीं। जनजाति प्रतिनिधियों का बहुमत वार्षिक आय कम था, जबकि गैर-जनजाति प्रतिनिधि बहुसंख्यक अपेक्षाकृत अधिक आय श्रेणी में आते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है कि कुल मिलाकर गैर-जनजाति प्रतिनिधियों की स्थिति अपने जनजाति समकक्षों से बेहतर थी।

ऐसा प्रतीत हुआ कि राजनीति से जुड़ा पारिवारिक माहौल राजनीति के करियर के लिए एक महत्वपूर्ण कारक हो सकता है। शोध से पता चला की लगभग 58 प्रतिशत निर्वाचित प्रतिनिधियों के पास उनके परिवार के सदस्य में से कोई था, जो पहले कभी पंचायत चुनाव लड़े थे। यह गैर-जनजाति प्रतिनिधियों के मामले में उनके जनजाति समकक्षों की तुलना में अधिक स्पष्ट था। यह पाया गया है कि सीट का आरक्षण भी जनजाति प्रतिनिधियों को चुनाव लड़ने के लिए प्रेरित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा था। इसके विपरीत, उनके गैर-जनजाति समकक्षों को आमतौर पर स्व-प्रेरित होने का दावा किया गया था। इस प्रकार, आरक्षण ने जनजाति प्रतिनिधियों और महिला प्रतिनिधियों के लिए भी एक महत्वपूर्ण

भूमिका निभाई है, क्योंकि इसने राजनीति में जमीनी स्तर पर उनके प्रवेश की सुविधा प्रदान की है। यह देखा गया है कि कम शिक्षा स्तर, वित्तीय संसाधनों की कमी और जाति से संबंधित प्रतिरोध चुनाव लड़ने के दौरान निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों द्वारा सामना किए गए प्रमुख अवरोध थे। उनके गैर-जनजाति समकक्षों के लिए इसके विपरीत चुनाव लड़ते समय राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता प्रमुख समस्या थी। पंचायतों में चुने गए प्रतिनिधियों का प्रदर्शन और उनकी ग्राम विकास में सार्थक योगदान करने की क्षमता, उनके कानूनों और नियमों से हो रहा है। यह उनकी शक्तियों और जिम्मेदारियों के बारे में जागरूकता और निर्वाचित प्रतिनिधियों के रूप में उनकी भूमिकाओं की महत्वपूर्णता पर उनकी संवेदनशीलता को दर्शाता है। निर्वाचित प्रतिनिधियों में से अधिकांश पंचायत अधिनियमों और इसके प्रावधानों से पूरी तरह या आंशिक रूप से अवगत थे। इसी तरह, पंचायत के कार्यों और शक्तियों की अच्छी समझ के मामले में जनजाति पुरुष प्रतिनिधि अपने गैर-जनजाति पुरुष समकक्षों से पीछे नहीं थे। लेकिन, महिला प्रतिनिधि, जनजाति और गैर-जनजाति, दोनों अपने पुरुष समकक्षों के समान बुद्धिमान नहीं थे। चुने गए आदिवासी जनजाति प्रतिनिधियों के बीच जागरूकता में अन्तर का प्रमुख कारण उन्हें समुचित प्रशिक्षण या अभिविन्यास कार्यक्रम से जोड़ने को माना जा सकता है।

प्रभावी भागीदारी की प्रकृति की जांच करने और इस तरह गांवों में चुने हुए जनजाति प्रतिनिधियों की स्थिति पर असर पड़ने के लिए, शोधकर्ता ने विभिन्न संकेतकों पर चुने गए जनजाति प्रतिनिधियों का साक्षात्कार लिया, ताकि वे अपनी भागीदारी के बारे में अपनी धारणा जान सकें और गाँव में अपनी सामाजिक सहभागिता में बदलाव ला सकें। आगे सोनभद्र जिले के ग्राम पंचायत स्तर पर मौजूदा सामाजिक अंतःक्रियात्मक पैटर्न का निरीक्षण करने के लिए, दूसरों की राय, यानी गैर-जनजातियो की राय लेना भी बहुत आवश्यक था। अतः यह हमें जनजाति प्रतिनिधियों के बारे में गैर-जनजाति मानसिकता में अंतर्दृष्टि भी प्रदान

किया। कुल मिलाकर विभिन्न आयामों में चुने गए जनजाति प्रतिनिधियों की भागीदारी की गुणवत्ता यथोचित रूप से अच्छी रही। कुल उत्तरदाताओं में से 75 प्रतिशत ने बताया कि चुने गए जनजाति प्रतिनिधि नियमित रूप से ग्राम सभा की बैठकों में भाग ले रहे थे। उत्तरदाताओं में से अधिकांश, जिन्होंने नकारात्मक (25%) में जवाब दिया, उनकी सामाजिक श्रेणी के बावजूद, जनजाति प्रतिनिधियों द्वारा बैठकों में कम प्रभावी भागीदारी के लिए शिक्षा की कमी को प्रमुख कारण बताया। इसके बाद अन्य कारण थे जैसे वित्तीय संसाधनों की कमी, जानकारी की कमी, प्रमुख जातियों का डर और पुरुष वर्चस्व एक कारण था । एक जनजाति प्रतिनिधि के अनुसार, जिन्होंने नकारात्मक में उत्तर दिया कि, उनका कहना था की "हमें बैठकों में हमसे जुड़े मुद्दों पर एक शब्द भी बोलने की अनुमति नहीं है, अगर हम उनका विरोध करने की हिम्मत करते हैं (प्रमुख जातियों के लोग), तो हमें गंभीर परिणाम भुगतने की धमकी दी जाती है"। एक अन्य जनजाति प्रतिनिधि ने दावा किया कि "हमन के लोग ई लोगन डाबा के राखेला" ये प्रमुख जाति के व्यक्ति हमें दबाकर रखते हैं)। जबकि, गैर-जनजाति प्रतिनिधि में से एक ने प्रमुख जातियों के डर को कम करने का कारण बताया, जैसे 'इनहैंके (जनजाति) खातिर ता सारा कानुन है, केके जेल मैं जाए के' (सभी कानून उनके पक्ष में हैं, जो चाहते हैं जेल जाना)। अधिकांश महिला प्रतिनिधि, चाहे उनकी सामाजिक श्रेणी, जो कि जनजाति और गैर-जनजाति हों, ग्राम सभा की बैठकों में पुरुष वर्चस्व के अलावा, अन्य कारणों के अलावा, ग्राम सभा की बैठकों में निर्वाचित जनजाति महिला प्रतिनिधियों की प्रभावी भागीदारी का प्रमुख कारण है। महिला प्रतिनिधियों में से एक ने कहा कि, 'महिला प्रतिनिधि अपने पति के साथ आती हैं। वे नहीं बोलते हैं, उनके पति करते हैं'। यह दर्शाता है कि जनजाति महिला प्रतिनिधि अपने पति या परिवारों के पुरुष सदस्य के लिए परदे के पीछे काम करती हैं।

ग्राम सभा की बैठकों में गाँव के जनजाति नागरिकों की भागीदारी काफी अधिक (50% से अधिक) बताई गई थी, जो निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों द्वारा बेहतर सामुदायिक जुटाव की ओर इशारा करता था। यह पाया गया है कि अधिकांश उत्तरदाताओं (80.26%) का विचार था कि निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधि ग्राम विकास कार्यों को प्रभावी ढंग से लागू कर रहे थे। लेकिन, लगभग 20 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने भी नकारात्मक उत्तर दिया। इसके विपरीत, एक जनजाति प्रधान ने कहा है कि, "जनजाति प्रतिनिधि बहुत सक्षम हैं और अपनी जिम्मेदारियों और ग्राम विकास कार्यों को बहुत प्रभावी ढंग से निष्पादित करते हैं"। हालांकि, कुल मिलाकर यह दर्शाता है कि गैर-जनजाति अब धीरे-धीरे स्वीकार करने लगे हैं। निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों द्वारा निभाई गई भूमिका, जो पंचायती राज संस्थाओं के पहले के दिनों में नहीं थी।

इसी तरह, उत्तरदाताओं का काफी अधिक प्रतिशत (71.49%) इस बात से सहमत था कि जनजाति प्रतिनिधि अपने दम पर निर्णय लेते हैं और इस संबंध में गैर-जनजाति प्रतिनिधियों से प्रभावित नहीं थे। लेकिन, 28.51 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने भी नकारात्मक में सूचना दी, अर्थात्, वे इस दृष्टिकोण से असहमत थे कि निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधि प्रभावी रूप से निर्णय लेने में सक्षम थे। उनकी असहमति के कारणों को जनजाति और गैर-जनजाति प्रतिनिधियों द्वारा प्रदान किए गए निम्नलिखित विचारों में प्रभावी रूप से प्रतिबिंबित किया गया था। चुने गए गैर-जनजाति प्रतिनिधियों में से एक ने कहा कि, "जनजाति प्रतिनिधि ज्यादातर मामलों में निरक्षर होते हैं और निरक्षर होने के कारण उन्हें काम करने में परेशानी होती है। वे चर्चा किए गए मुद्दों से जूझने में असफल होते हैं और इसलिए निर्णय लेने में संकोच करते हैं"। उनके गाँव की स्थिति का वर्णन करने वाले प्रतिनिधियों ने कहा कि, "यहाँ प्रमुख जाति हावी हैं और अपने लोगों के लाभ के लिए कार्यक्रमों और नीतियों का निर्धारण

करते हैं जबकि अधिकांश गरीब और कमजोर लोग उनका विरोध करने से डरते हैं। उन्हें बैठकों में बोलने की अनुमति नहीं है "। इसी तरह, एक जनजाति प्रधान ने कहा कि, "मेरे गाँव के एक दबंग ने ग्राम सभा की भूमि में अवैध निर्माण शुरू कर दिया, जब मैंने उसका विरोध किया तो उसने मुझे गंभीर परिणाम भुगतने की धमकी दी और यहाँ तक कि मेरे खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव लाने की भी कोशिश की लेकिन किसी तरह असफल रहा" । जहाँ पहले की सत्ता साधन संपन्न उच्च जातियों के हाथों में केंद्रित थी, आज ग्राम पंचायत गैर-उच्च जातियों द्वारा नियंत्रित है और पारंपरिक अभिजात वर्ग को ग्रामीण शक्ति संरचना स्तर पर पृष्ठभूमि में धकेला जा रहा है।

राजनीतिक पदाधिकारी होने के नाते, निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों को नियमित रूप से ग्राम पंचायत गतिविधियों से संबंधित स्थानीय नौकरशाही के साथ बातचीत करनी होती थी। इसलिए, जिस हद तक जनजाति प्रतिनिधि स्थानीय सरकारी अधिकारियों के साथ बातचीत करते हैं, वह ग्राम पंचायत स्तर पर उनकी प्रभावी भागीदारी का एक महत्वपूर्ण संकेतक था। इस संदर्भ में, यह देखा गया है कि अधिकांश निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों के सामाजिक समावेश की प्रकृति और सीमा पर अध्ययन ने पंचायत स्तर पर निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों की सामाजिक सहभागिता प्रक्रिया पर ग्राम पंचायत गतिविधियों में उनकी प्रभावी भागीदारी के प्रभाव का आकलन करने के साथ अपनी सक्रियता दिखाई है। यह देखा गया कि पंचायती राज अधिकारी के रूप में चुने जाने और काम करने का सकारात्मक प्रभाव था। यह इस तथ्य से स्पष्ट था कि उत्तरदाताओं के एक बड़े अनुपात का मतलब था कि पंचायत स्तर पर प्रभावी भागीदारी से निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों के आत्मसम्मान और विश्वास में वृद्धि हुई। ग्राम पंचायत बैठकों में जनजाति प्रतिनिधियों की स्वीकार्यता थी। इसका मतलब यह था कि जनजाति प्रतिनिधि ग्राम पंचायत बैठकों के दौरान स्वतंत्र रूप से मुद्दों को

उठाने में सक्षम थे और खुले तौर पर और खुलकर अपने विचार भी रखते थे। यहां अधिकांश पुरुष प्रतिनिधि (92.67%) 53.85 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों के खिलाफ दावे पर सकारात्मक थे। यह दर्शाता है कि महिला प्रतिनिधियों को अभी भी पंचायत स्तर पर भेदभाव का सामना करना पड़ रहा था, खासकर जनजाति महिला प्रतिनिधियों को। यह दर्शाता है कि जनजाति महिलाओं को जाति और पितृसत्ता के दोहरे भेदभाव का सामना करना पड़ रहा है। ग्राम पंचायत सदस्य के रूप में निर्वाचित होने के साथ-साथ ग्राम समुदाय के विकास को सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण पहल करने की ज़िम्मेदारी उनके साथ आई। यह प्रक्रिया आसान हो गई अगर चुने गए जनजाति प्रतिनिधि पूरे गाँव समुदाय से समर्थन पाने में सफल रहे। काफी अधिक प्रतिशत (74.12%) ने दावा किया कि चुने गए जनजाति प्रतिनिधियों को पूरे गांव समुदाय का समर्थन मिल रहा था। इसके अलावा, उत्तरदाताओं के उच्च अनुपात (85.53%) ने दावा किया कि पंचायत स्तर पर प्रभावी भागीदारी के कारण अपने स्वयं के सामाजिक श्रेणी के भीतर चुने हुए जनजाति प्रतिनिधियों के संबंध में सुधार हुआ है। इसी तरह, अधिकांश उत्तरदाताओं ने दावा किया कि ग्रामीणों के बीच निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों के सम्मान में उल्लेखनीय सुधार हुआ है। लेकिन, जनजाति प्रतिनिधियों के कम अनुपात ने अपने समुदाय के बाहर ग्रामीणों के सम्मान में कोई बदलाव महसूस नहीं किया।

निर्वाचित जनजाति महिला प्रतिनिधियों में से एक के अनुसार, 'कूनो इज्जत-विज्जत नहीं बड़ल बा, बेस इहे बा हमर घर के बहार सखीला' (किसी भी मामले में कोई सुधार नहीं, केवल बदलाव यह है कि हम अपने घरों के बाहर जा सकते हैं)। इसलिए, यह इंगित करता है कि ग्रामीण स्तर पर प्रचलित कुछ रूपों में अभी भी भेदभाव। यह भी देखा गया कि निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधि पंचायती राज संस्थाओं में आरक्षण नीति के कारण सत्ता और प्रभाव का अधिक हिस्सा प्राप्त कर रहे थे। कुल मिलाकर, यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि आरक्षण के

उपकरण के माध्यम से, जनजातियो को पहली बार पंचायतों में प्रभावी प्रतिनिधित्व का अवसर प्रदान किया गया है, जिसने पंचायतों की सामाजिक संरचना को बदल दिया है। जो प्रतिनिधि वंचित समूह के हैं वे निर्णय लेने की संस्था में अपनी उपस्थिति और कार्यों के माध्यम से सदस्यता के सामाजिक अर्थ को बदल सकते हैं। अब तक प्रभावी राजनीतिक भागीदारी और बेहतर सामाजिक सहभागिता प्रक्रिया के माध्यम से निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों के सामाजिक समावेश का संबंध रहा है, कुल उत्तरदाताओं में से दो-तिहाई (67.11%) इस राय के थे कि चुने गए जनजाति प्रतिनिधियों को सामाजिक रूप से शामिल किया गया है समाज की मुख्यधारा में काफी हद तक जुड़ रही हैं । हालाँकि, इस मामले में लगभग 73 प्रतिशत जनजाति प्रतिनिधियों की राय थी कि वे सामाजिक रूप से मुख्यधारा के समाज में काफी हद तक (88.73% जनजाति पुरुष प्रतिनिधि और 41.67% महिला प्रतिनिधि) शामिल थे। लेकिन, सामाजिक समावेश जनजाति महिला प्रतिनिधियों का मामला थोड़ा हतोत्साहित करने वाला था, क्योंकि उनमें से लगभग 58 प्रतिशत ने अपने समावेश को कुछ हद तक या बिल्कुल भी नहीं बताया।

इस विशेष संदर्भ में, एक महिला ग्राम प्रधान द्वारा दिया गया एक बयान काफी दिलचस्प लग रहा है। यह निम्नानुसार था, "जनजाति महिला प्रतिनिधियों को अपने कार्यों को करने में विभिन्न बाधाओं का सामना करना पड़ता है। एक आम धारणा है कि जनजाति महिलाओं को प्रमुख जातियों के सामने नहीं बोलना चाहिए और उन्हें अपने घर से बाहर नहीं जाना चाहिए। वे भी मजबूर हैं। घूँघट में हो, जो उनके काम के लिए एक बाधा है। इसके अलावा, उनके अधिकांश कार्य उनके पति द्वारा संभाल रहे हैं, इसलिए उनके पास गाँव की गतिविधियों में बहुत कुछ नहीं है" जनजाति प्रतिनिधियों के दो-पांचवें (43.93%) से अधिक लोगों ने दावा किया कि उन्होंने कभी भी ग्राम पंचायत स्तर पर किसी भी जाति-आधारित भेदभाव का

सामना नहीं किया और उन्हें अनदेखा महसूस नहीं किया क्योंकि वे जनजाति थे, लेकिन फिर भी उनमें से 56 प्रतिशत ने बताया कि कभी-कभी या अक्सर जनजाति होने के कारण उन्होंने उपेक्षा महसूस की। इस प्रकार, यह एक स्पष्ट संकेत था कि अभी भी ग्राम पंचायत स्तर पर जाति आधारित भेदभाव मौजूद है और जनजाति महिला प्रतिनिधियों को अपने पुरुष समकक्षों की तुलना में अधिक जातिगत भेदभाव का सामना करना पड़ता है। भारतीय संविधान प्रत्येक नागरिक के लिए समानता का आश्वासन देता है। किसी भी मापदंड के आधार पर भेदभाव नहीं होना चाहिए। इसलिए, जब गैर-जनजाति प्रतिनिधियों द्वारा ग्राम पंचायत बैठकों के दौरान समान विमान में बैठने की अनुमति देने पर जनजाति प्रतिनिधियों की राय ली गई थी, तो यह पाया गया कि कोई भी सक्रिय भेदभाव का व्यवहार नहीं किया गया है। जनजाति उत्तरदाताओं (84.11%) के एक उच्चतर अनुपात ने दावा किया कि वे गैर-जनजातियो के बराबर पंचायतों में बैठने की जगह हैं।

भारतीय संविधान द्वारा अस्पृश्यता को कानून द्वारा समाप्त कर दिया गया है। यह ध्यान दिया गया है कि अभी भी गांवों में अस्पृश्यता की प्रथा का अस्तित्व था। लेकिन दिलचस्प बात यह है कि ग्राम पंचायतों के लिए चुने गए अधिकांश प्रतिनिधियों ने दावा किया कि उनके खिलाफ छुआछूत की प्रथा में कमी आई है। इस प्रकार, यह जमीनी स्तर पर जनजातियो द्वारा सत्ता हासिल करने के महत्व का स्पष्ट प्रकटीकरण था, जिसने जमीनी स्तर पर अन्य जाति समूहों के माध्यम से अपने सामाजिक संपर्क को महत्वपूर्ण रूप से बदल दिया। एक जनजाति वार्ड सदस्य और दूसरा जनजाति वार्ड सदस्य। पंचायत कार्यालय में जनजाति और गैर-जनजाति प्रतिनिधियों के लिए पीने के पानी के अलग-अलग कंटेनर हैं और हम पंचायत कार्यालय में चाय या पानी पीने के लिए अलग-अलग कप का उपयोग कर रहे हैं। ”लेकिन, कुल मिलाकर यह प्रतीत हुआ कि पंचायत स्तर पर अस्पृश्यता कम हो रही है।

कार्य के किसी भी क्षेत्र में समस्याओं और चुनौतियों का सामना करना पड़ेगा। किसी व्यक्ति की क्षमता किसी भी बाधा को दूर करने की क्षमता पर निर्भर करती है जो उसके रास्ते में बाधा बनती है। अड़चनों को दूर करने के उपाय करने के लिए, सबसे पहले यह पता लगाना चाहिए कि वे कौन सी अड़चनें हैं जिन्हें वह दूर करना चाहता है। एक निर्वाचित जमीनी स्तर के प्रतिनिधि के रूप में, स्थानीय समुदाय के सामने आने वाली चुनौतियाँ उनके लिए अधिक होंगी। निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों ने अपने प्रमुख कर्तव्यों का पालन करते हुए विभिन्न प्रमुख बाधाओं का सामना किया। बड़ी बाधा जाति आधारित भेदभाव नहीं था, जितनी कि शिक्षा की कमी रही ; गुणवत्ता प्रशिक्षण की कमी, कमजोर आर्थिक स्थिति और सरकारी अधिकारियों द्वारा लापरवाही भी देखी गयी।

हालांकि पंचायती राज संस्थाओं में जनजातियो की भागीदारी और भूमिका में कई संरचनात्मक और सांस्कृतिक बाधाएं हैं, लेकिन यह पाया गया है कि इन सभी बाधाओं के बावजूद निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधि पंचायती राज निकायों के माध्यम से महत्वपूर्ण और सकारात्मक भूमिका निभाते हैं। जनजातियो का सामाजिक समावेश मुख्य रूप से इन पंचायती राज संस्थाओं में जनजाति स्वयं की भूमिका पर निर्भर करेगा। तेजी से यह पाया गया है कि जनजाति सिर्फ सत्ता में आने से संतुष्ट नहीं हैं। वे प्रभावी रूप से पंचायतों में भाग ले रहे हैं और अपने स्वयं के समुदाय के उत्थान के लिए और साथ ही अपने गांवों के विकास के लिए काम कर रहे हैं। उनकी भागीदारी को अधिक प्रभावी, कुशल और सफल बनाने के लिए और इसलिए गांव और समाज स्तर पर उनकी सामाजिक सहभागिता को बेहतर बनाने के लिए, समाज के पारंपरिक दृष्टिकोण और पितृसत्तात्मक मूल्यों में महत्वपूर्ण बदलाव की आवश्यकता है। जमीनी स्तर पर राजनीति में जनजातियो की भागीदारी के पक्ष में गैर-जनजातियो के सकारात्मक नजरिए और मानसिक बदलाव की भी जरूरत है। उनकी ओर से

जनजाति प्रतिनिधियों को अधिक शिक्षित होने की आवश्यकता है; स्व-प्रेरित, अपने अधिकारों के लिए अधिक मुखर बनें, और पंचायत निकायों के कामकाज में उनके अधिकारों, जिम्मेदारियों और कर्तव्यों से संबंधित उनकी क्षमता ज्ञान आधार और आवश्यक कौशल में सुधार करने के लिए उचित प्रशिक्षण दिया गया। हालांकि, इस अध्ययन से जो समग्र तस्वीर सामने आई, वह यह है कि हालांकि जनजाति अभी भी सामाजिक स्तर पर विभिन्न भेदभाव और अपमान से पीड़ित हैं, लेकिन पंचायती राज संस्थानों ने उन्हें राजनीतिक सशक्तीकरण और इसलिए राजनीतिक समावेश के लिए अवसर प्रदान किया है। जनजाति, अछूत, जो वर्ण व्यवस्था का हिस्सा भी नहीं थे, भारतीय समाज की सबसे निचली श्रेणी पीआरआई के माध्यम से एक प्रमुख भूमिका निभाते हैं। इस प्रकार, यह भारतीय लोकतंत्र की एक बड़ी उपलब्धि है और वास्तव में ग्राम स्तर पर पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से मौन क्रांति हो रही है। उत्तर प्रदेश में राजनीतिक गोलबंदी और राजनीतिक मुखरता की मौजूदा स्थिति ने जनजातियो को ग्राम पंचायत स्तर पर उच्च प्रभावी भागीदारी के लिए सुविधा प्रदान की है और इसलिए, इससे व्यक्तिगत और सामाजिक-सांस्कृतिक अंतरिक्ष स्तर पर जनजातियो की सामाजिक सहभागिता में सुधार होता है। प्रभावी राजनीतिक भागीदारी और इसलिए बेहतर सामाजिक सहभागिता निश्चित रूप से मुख्य धारा के समाज में जनजातियो के समग्र सामाजिक समावेश को जन्म देगी।

जनजातीय विकास को एक ऐसे दृष्टिकोण के रूप में माना गया है जो जनजातीय लोगों को केंद्र स्तर पर रखता है। आदिवासी लोग पूरे भारत में फैले हुए हैं। उनकी अपनी संस्कृति और परंपराएं हैं। हालाँकि, वे अभी भी कई समस्याओं का सामना कर रहे हैं जो उनकी प्रगति और विकास में बाधा डालती हैं जैसे, गरीबी, शैक्षिक समस्याएं, भूमि समस्याएं, स्वास्थ्य समस्याएं, नक्सलवाद, बच्चों का शोषण, अक्षम प्रशासन और शासन जिनका विश्लेषण इस

पेपर के माध्यम से किया गया है। यह पत्र सरकार द्वारा सुझाए और कार्यान्वित किए गए कई उपायों का विश्लेषण करता है, जैसे, संवैधानिक प्रावधान और सुरक्षा, शैक्षिक सुविधाएं, जनजाति सलाहकार परिषद, विधानमंडलों और पंचायतों में प्रतिनिधित्व, अनुसूचित जनजातियों के लिए आयोग, नौकरियों में आरक्षण, आर्थिक अवसर अनुसूचित और जनजातीय क्षेत्रों का प्रशासन, राज्यों में कल्याण विभाग की स्थापना और जनजातीय अनुसंधान संस्थान। यह लेख चर्चा करता है कि भारतीय समाज और राष्ट्र के सकारात्मक परिवर्तन लाने के लिए भारत के आदिवासियों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में काफी सुधार कैसे होना चाहिए।

भारत में जनजातीय लोगों को आदिवासी या जनजाति के रूप में जाना जाता है। वे 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की आबादी का 8.6% शामिल हैं। आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात, झारखंड, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा, पश्चिम बंगाल, उत्तर-पूर्वी राज्यों और भारत के अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में इनकी बड़ी आबादी है। वे भारत के मूल निवासी होने के कारण आदिवासी के रूप में जाने जाते हैं। उन्हें भारतीय संविधान द्वारा अनुसूचित जनजाति के रूप में वर्गीकृत किया गया है। उत्तर में जम्मू और कश्मीर से लेकर उत्तराखंड और उत्तराखंड में हिमालय के साथ एक बड़ा आदिवासी बेल्ट है, पश्चिम और असम, मेघालय, मणिपुर और उत्तर-पूर्वी भारत में नागालैंड। मध्य भारत हमारे देश की लगभग 75% आदिवासी आबादी का घर है। वास्तव में आदिवासियों की उपस्थिति देश के लगभग सभी राज्यों में अधिक या कम हद तक है। आदिवासी या आदिवासी आमतौर पर पहाड़ियों और जंगलों जैसे सुदूर और अलग-थलग क्षेत्रों में एक अलग और एकांत जीवन जीते हैं। प्रत्येक आदिवासी समुदाय की आम तौर पर अपनी अनूठी संस्कृति, भाषा और धर्म होता है। जनजातीय समाज आम तौर पर समतावादी होते हैं और वे भूमि के सामुदायिक

स्वामित्व में विश्वास करते हैं और उसका अभ्यास करते हैं। हालाँकि, 10 वीं शताब्दी की शुरुआत में भारत के मुगल आक्रमण का आदिवासियों पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। इससे भूमि के सामूहिक स्वामित्व की अवधारणा में गंभीर व्यवधान उत्पन्न हुआ। ब्रिटिश शासन के दौरान, आदिवासी समुदायों ने अपने वन क्षेत्र पर अपना अधिकार खो दिया। अंग्रेजों द्वारा पारित नए कानून के अनुसार, आदिवासियों के वन क्षेत्र उन जमींदारों की कानूनी संपत्ति बन गए जिन्हें उनके द्वारा नियुक्त किया गया था। इसके बाद, आदिवासी क्षेत्रों में गैर-आदिवासियों के आगमन ने उन्हें जंगल और पैतृक भूमि संसाधनों से बाहर कर दिया, जिस पर वे अपनी आजीविका के लिए निर्भर थे। जमींदारों द्वारा उनका बेरहमी से शोषण किया गया जिसका एकमात्र उद्देश्य वन संसाधनों से अधिकतम आर्थिक लाभ प्राप्त करना था। परिणामस्वरूप, आदिवासियों ने दुख, पीड़ा, अभाव और कठिनाई का जीवन व्यतीत किया। नतीजतन, क्रूर उत्पीड़न और अधीनता की प्रतिक्रिया के रूप में, उन्होंने अक्सर 18 वीं और 19 वीं शताब्दी की शुरुआत में अंग्रेजों और जमींदारों के खिलाफ विद्रोह किया। हालाँकि, उनकी स्थिति में शायद ही कोई सुधार हुआ हो क्योंकि औपनिवेशिक शासकों ने उनकी समस्याओं और जरूरतों से आंखें मूंद ली थीं।

भारत में जनजातीय आबादी के संबंध में वर्तमान परिदृश्य पर एक नज़र डालना सार्थक होगा। यद्यपि देश ने स्वतंत्रता के बाद विभिन्न क्षेत्रों में छलांग और सीमा से प्रगति की है, फिर भी आदिवासियों की स्थिति में अनुपातिक रूप से कोई बदलाव नहीं आया है। उन्हें अभी भी कई मुद्दों का सामना करना पड़ रहा है जो उनकी प्रगति और विकास में बाधा डालते हैं।

जनजातीय विकास के उपाय एवं सुझाव

यह अनिवार्य है कि भारत में आदिवासियों को राष्ट्रीय मुख्यधारा में एकीकृत करने के लिए उनकी स्थिति में काफी सुधार होना चाहिए। आजादी के बाद से सरकार द्वारा कई उपाय सुझाए और लागू किए गए हैं। आदिवासी विकास के संबंध में मुख्य उपाय निम्नलिखित हैं।

संवैधानिक प्रावधान

भारत के संविधान में अनुसूचित जनजातियों के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं।

संविधान के अनुच्छेद 342 ने भारत में अनुसूचित जनजाति समुदायों को निर्दिष्ट किया है।

अनुच्छेद 164 में आदिवासी बहुल राज्यों जैसे बिहार, मध्य प्रदेश और ओडिशा में आदिवासी कल्याण मंत्रालय का प्रावधान है। ये मंत्रालय अपने-अपने राज्यों में अनुसूचित जनजातियों के कल्याण की देखभाल करते हैं।

अनुच्छेद 244 उन राज्यों के प्रशासन के लिए संविधान में पांचवीं अनुसूची को शामिल करने का प्रावधान करता है जहां बड़ी जनजातीय आबादी है। इसके अलावा, अनुच्छेद 275 अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के लिए केंद्र सरकार द्वारा राज्य सरकारों को विशेष निधि प्रदान करने का प्रावधान करता है।

शिक्षण सुविधाएं

यह एक निर्विवाद तथ्य है कि शिक्षा सामाजिक-आर्थिक प्रगति और समृद्धि की कुंजी है। इसलिए, आदिवासी लोगों के शैक्षिक स्तर में सुधार पर विशेष जोर दिया गया है। तदनुसार, उन्हें प्राथमिकता के आधार पर व्यावसायिक और तकनीकी प्रशिक्षण दिया जा रहा है। इसके अलावा, बेहतर सीखने के परिणाम के लिए उन्हें वजीफा, छात्रवृत्ति, किताबें, स्टेशनरी और

अन्य आवश्यक उपकरण प्रदान किए जाते हैं। भारत के विभिन्न हिस्सों में उनके लिए आवासीय विद्यालय भी स्थापित किए गए हैं।

जनजाति की सलाहकार परिषद

संविधान की पांचवीं अनुसूची में आंध्र प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, ओडिशा, पंजाब, राजस्थान और पश्चिम बंगाल जैसे अनुसूचित क्षेत्रों वाले राज्यों में एक जनजाति सलाहकार परिषद की स्थापना का प्रावधान है। ये परिषदें अनुसूचित जनजातियों के कल्याण और अनुसूचित क्षेत्रों के विकास से संबंधित मामलों पर सरकार को सलाह देती हैं।

विधानमंडलों और पंचायतों में प्रतिनिधित्व

भारतीय संविधान ने अनुसूचित जनजातियों की सुरक्षा और उनके शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देने के लिए प्रावधान किए हैं। संविधान के अनुच्छेद 330 और 332 के तहत लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटें आरक्षित की गई हैं। इसी प्रकार पंचायती राज व्यवस्था के अंतर्गत ग्राम पंचायतों, प्रखंड पंचायतों, जिला पंचायतों आदि में अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थान आरक्षित हैं।

अनुसूचित जनजातियों के लिए आयोग

भारत का संविधान अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए सुरक्षा उपायों से संबंधित सभी मामलों की जांच के लिए अनुच्छेद 338 के तहत एक आयुक्त की नियुक्ति का प्रावधान करता है। यह इन सुरक्षा उपायों के समुचित कार्य के बारे में राष्ट्रपति को रिपोर्ट भी करता है।

आर्थिक अवसर

भारत में जनजातीय आबादी का एक बड़ा बहुमत अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर है। हालांकि, उनके पास आम तौर पर आधुनिक और वैज्ञानिक खेती के तरीकों तक पहुंच नहीं है। बड़ी संख्या में आदिवासी लोग झूम खेती को अपनाते हैं जिसका लंबे समय में मिट्टी की उत्पादकता और फसल की उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। यह भारत के कई आदिवासी बहुल राज्यों में एक बड़ी समस्या है। इसलिए, सरकार ने इन राज्यों में स्थानांतरित खेती को नियंत्रित करने और हतोत्साहित करने के लिए एक योजना शुरू की है। इसके अलावा, बंजर भूमि को पुनः प्राप्त करने और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों के बीच वितरित करने के लिए सिंचाई सुविधाओं में सुधार के लिए कई उपाय किए गए हैं। इसके अलावा, उर्वरक, बेहतर बीज, पशुधन और कृषि उपकरण आदि की खरीद के लिए सुविधाएं प्रदान की गई हैं। पशु प्रजनन और मुर्गी पालन जो अत्यधिक लाभदायक हो सकता है, को भी इन लोगों के बीच बढ़ावा दिया जाता है। सरकार ने कुटीर उद्योगों के विकास पर विशेष बल दिया है। इस प्रकार ऋण और सब्सिडी प्रदान करने के लिए विभिन्न योजनाएं शुरू की गई हैं। बैंकों के अलावा, सहकारी समितियां भी भारत के विभिन्न राज्यों में आदिवासी लोगों को ऋण प्रदान करती हैं।

अनुसूचित और जनजातीय क्षेत्रों का प्रशासन

भारत सरकार ने "अनुसूचित क्षेत्रों" के प्रशासन के संबंध में कुछ दिशानिर्देश तैयार किए हैं। यह आदिवासी समुदायों के लिए प्रशासनिक दक्षता में सुधार और जीवन की बेहतर गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक धन प्रदान करता है।

राज्यों में कल्याण विभाग की स्थापना

भारत के संविधान के अनुच्छेद 164 (1) के प्रावधान के तहत, कई राज्यों में कल्याण विभाग की स्थापना की गई है, जहां बड़ी जनजातीय आबादी है। इन विभागों को हर राज्य में एक मंत्री के अधीन रखा गया है।

जनजातीय अनुसंधान संस्थान भारत की स्वतंत्रता के बाद, केंद्र सरकार और राज्य सरकारों ने जनजातीय लोगों के कल्याण और उत्थान के लिए जोरदार प्रयास किए हैं। उत्तरोत्तर योजनाओं में उनके विकास के लिए विशेष कार्यक्रम चलाए गए हैं। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए, बिहार, मध्य प्रदेश, ओडिशा, राजस्थान और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में जनजातीय और हरिजन अनुसंधान संस्थान स्थापित किए गए हैं। ये संस्थान आदिवासी कला, संस्कृति, रीति-रिवाजों और परंपराओं का गहन अध्ययन करते हैं।

इन सभी उपायों का उद्देश्य भारत की विशाल जनजातीय आबादी के जीवन स्तर और गुणवत्ता को ऊपर उठाना है। जिन्होंने गरीबी, पिछड़ेपन, दुख, उत्पीड़न और सामाजिक भेदभाव का जीवन व्यतीत किया है। परिणामस्वरूप, अभी भी पंचायती राज ने अपनी पूरी क्षमता से नहीं कार्य कर पायी हैं। जिस कारण आज भी आदिवासी समुदाय कई सुविधाओ से वंचित रह गयी है। यह आशा की जाती है कि पंचायती राज संस्था के प्रयासों और पहलों से इन लोगों और कल्याण में आने वाले समय में उल्लेखनीय वृद्धि होगी। हमारा राष्ट्र तब तक समृद्ध नहीं हो सकता जब तक कि जनसंख्या का एक बड़ा वर्ग और हाशिए पर रह कर जीवन व्यतीत करे। इसलिए, यह सभी के हित में है कि भारत के आदिवासियों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में पर्याप्त सुधार होना चाहिए ताकि पूरे भारतीय समाज और राष्ट्र में सकारात्मक परिवर्तन लाया जा सके। लोकतान्त्रिक विकेंद्रीकरण की नीति को सही मानते हुए अब तक जितने भी पंचायती राज व्यवस्था में संशोधन और नियम बने है। उन सभी में

सबसे निचले तबके जिनमे आदिवासी समुदाय प्रमुख रूप से आतें हैं के लिये ये संस्थाए उनके स्वाबलंबन और उनके समावेशी विकास के लिये सबसे प्रभावशाली संस्था साबित हुई है।